Conclusion

उपसंहार

उपसंहार

आज लोक शब्द का प्रयोग जिस अर्थ में किया जा रहा है, वह हमेशा एक जैसा ही अर्थ या अभिप्राय का द्योतक नहीं रहा है। सन्दर्भ के अनुरूप उसके अर्थ एवं अभिप्राय में संकोच अथवा विस्तार होता रहा है। फिर 'फोक' को 'लोक' का पर्याय मानना भ्रान्त ही नहीं, भ्रामक है। 'फोक' में जहाँ जनजीवन को वर्तमान के पीछे मुड़कर अतीत के आइने में अनुन्नत रूप में देखा परखा जाता है, वहाँ लोक में उसे विकसनशील पारम्परिक परिप्रेक्ष्य में वर्तमान का एक और अविभाज्य अंग समझा जाता है। लोक कोरे अनुमान का नहीं, प्रत्यक्ष अनुभव का आधार है। लोक के आलोक में ही हम जीवन का साक्षात्कार कर पाते हैं। लोक काल – बाधित होकर भी देश मूलक है। लोक में समग्र मानव – जीवन प्रतिबिंबित है। इसमें उसे अलग – अलग नहीं समझा – समझाया जा सकता है। वहाँ जीवन – धारा का सातत्य प्रवाहित होता रहता है। परन्तु ऐसा नहीं है, कि हमेशा पुरानी परम्पराएँ ही ज़ीवित रहती हैं, उनके पार्श्व में लोकाचार, लोकव्यवहार, लोक – मंगल, लोक – कला, लोकगीत, लोक – संगीत, लोक – नीति, लोक – रीति, लोक – साहित्य, लोक – संस्कृति और लोक – कथाएँ आदि को समझने समझाने के लिए 'लोक' शब्द की प्रकृति और प्रयोग को जान लेना अति आवश्यक है।

भारत के अधिकांश लोग गाँवों में निवास करते हैं। इन ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक भाषाएँ, अनेक वेशभूषा, अनेक धर्म, जातियाँ और अनेक मतों में विश्वास करने वाले हैं। जहाँ तैंतीस करोड़ देवताओं की पूजा की जाती है। जहाँ का हर गाँव अपनी अलग विशेषता रखता है। और हर गाँव की अलग – अलग स्थिति भी है, जैसे हर परिवार की अपनी अलग – अलग समस्याएँ हैं, हर व्यक्ति की अलग मनोदशा है, इतने बड़े

पैमाने पर अलगावों के बावजूद सब की आत्मा एक है। भाषा भेद होते हुए भी लोकसंस्कृति तथा लोक कथाएँ एक जैसी ही देखने को मिलती हैं। उसी प्रकार से पूरे भारत वर्ष में लगभग एक जैसी ही संस्कृति देखी जा सकती है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध में भारतीय संस्कृति का परिचय दिया गया है तथा संस्कृति किसी एक संस्कृति से बँधकर नहीं रहती है। इस तथ्य पर प्रकाश डालते हैं।

हम भारत के इतिहास पर दृष्टिगत् करते हैं, तो कई धर्म, जातियों का यहाँ पर आगमन हुआ और उन्हीं सब का मिश्रण हमारी संस्कृति है। हमारे वेदों – पुराणों को भारतीय संस्कृति का देयता माना जाता है। क्योंकि सिर्फ ईसाई धर्म और सिक्ख धर्म से भारतीय संस्कृति नहीं बनी है, बल्कि दूसरे देश से आनेवाली जातियाँ भी इसके रचयिता हैं जैसे कुशाण, शक, हुण, पठान और मुगल, पुर्तगाली, फ्रांसीस, अंग्रेज आदि।

इन सबके पश्चात् भी पूर्ण रुप से इस बात का खण्डन नहीं हो सकता कि भारतीय संस्कृति की विद्या को चुनौती किस देश ने और किन रुप में दी है। भारतीय संस्कृति को दो पन्नों में या दो पुस्तकों में समेटना नामुमकिन है। भारतीय संस्कृति का फलक बताते हुए कहा है कि आचार – विचार का दूसरा नाम संस्कृति है। भारतीय संस्कृति के निम्नलिखित अंग प्रथम बार बताने का प्रयत्न इस शोध प्रबंध में किया है। जैसे राजनैतिक, सामाजिक, नैतिक, कलात्मक, आर्थिक।

यहाँ की लोक संस्कृति को दर्शाते हुए बताया गया है कि जो व्यक्तियों के द्वारा कही कथाएँ हैं जो कि कुछ लिखित रुप तथा कुछ अलिखित है। जिनमें कई तरह की कथाएँ होती है। जैसे परी, भूत – प्रेत, राजा, पशु – पक्षी आदि। जिनका कोई

आधार तो नहीं होता परन्तु कुछ विद्वानों के अनुसार भारतीय आचार्यों ने लोकवार्ता का आरंभ किया।

कुमाऊँनी संस्कृति विराट भारतीय संस्कृति की एक छोटे से क्षेत्र की संस्कृति है इस देश में कहीं घने वन, कहीं सूखे रेगिस्तान, कहीं पहाड़ी प्रदेश आदि हैं। इन्हीं क्षेत्रों ने मानवजीवन को प्रभावित किया है। जिस कारण से विशेष क्षेत्र की विशेष संस्कृति बनी है। उसी प्रकार से रहने – खाने, बोलने में भी भिन्नता होती है।

पुरापाषाण युग के मानव की जो भी जानकारी मिली है उस आधार पर कह सकते हैं कि उस समय सांस्कृतिक वृद्धि बहुत कम हुई थी। अलग – अलग वातावरण में रहने से मानव से नयी सोच, नया तरीका तथा अलग – अलग भाग बन गये जैसे कि भूकम्प, बाढ़, सूखा आदि घटनाओं से मानव ने अपने विचार आदि बदले। इससे ही धर्म, जातियाँ, विचार, आचार, व्यवहार आदि आये जिनसे अलग – अलग संस्कृति ने जन्म लिया। बहुत लम्बे समय बाद यह सभी एक – दूसरे से मिलने पर एक – दूसरे की संस्कृति को अपनाने लगे। इस प्रकार नयी – नयी संस्कृति में नयी – नयी बातें जुड़ने लगी।

हर क्षेत्र के अपने पहनावे, रहन – सहन, खान – पान, धर्म, आस्था, विश्वास होता है। उसी प्रकार से कुमाऊँ क्षेत्र की भी अपनी परंपराएँ हैं। यहाँ पर सभी जाति के लोग बसते हैं। जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि।

यहाँ पर पुरुष धोती, पजामा, अचकन, टोपी पहनते हैं तथा स्त्रियाँ अँगिया, घाघरा, लहंगा और धोती पहनती हैं। पर नये जमाने में सभी लोगों के पहनावे में बदलाव आया है। अब अधिकतर लोग (पुरुष) पेन्ट, शर्ट तथा स्त्रियाँ धोती आदि पहनती है। और शादी – ब्याह में पिछौड़ा अभी भी चलन में है। खान – पान के रुप

में चावल, दाल, रोटी, सब्जी है। सुबह रोटी – साग, दोपहर को चावल – दाल तथा शाम को रोटी – साग खाया जाता है। जो अब भी है। मडुवा जो की सस्ता अनाज है। गरीब लोग उसे खाते हैं। पर अब सभी मडुवा खाना पसंद करते हैं और पहले की तरह शुद्र जाति के लोग अभी भी ब्राह्मणों की रसोई में नहीं जाते और यदि कुछ भी ब्राह्मण लोग खाने को देते हैं। तो वह बिना छुए लेते हैं तथा अपना बरतन धोकर रखकर जाते हैं, जिस पर ब्राह्मण गौ – मूत्र छिड़ककर उठाकर धोते हैं, फिर घर में ले जाते हैं। भटिया का जौल, गहत के डुबके व दाल, पल्यौ या झोली (कढ़ी), ककड़ी का रायता, चौसा आदि उनके प्रिय व्यंजन हैं।

विभिन्न संस्कारों की बात की जाय तो यहाँ पर व्रत, विवाह, नामकरण आदि संस्कार में शगुनाखर या फाग गाया जाता है। यहाँ के लोगों का जीवन धर्म पर ज्यादा निर्भर है। समय – समय पर पूजा पाठ सभी कराते ही रहते हैं तथा साल पर या तीन साल सभी कुल देवी के नाम पर भंडारा करते हैं। जिसमें पूरा गाँव हाथ बँटाता है तथा काम काज के समय में भी पूरा मिल बाँट कर काम करता है। यहाँ देवी – देवताओं में अथाह आस्था तथा विश्वास है। कुमाऊँ क्षेत्र के विविध मेले और त्योहार है पूरे साल किसी न किसी प्रकार का उत्सव मनाते ही रहते हैं। अपनी मेहनतकश जिंदगी में भी गीत गाते हुए काम करते रहते हैं। शिक्षा प्रचार – प्रसार सरकार के प्रयत्न के बाद भी कम हो पाया है। यही कारण है कि यहाँ पर जादू – टोना, अंधविश्वास की महत्ता ज्यादा देखने को मिलती है। कुमाऊँनी लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती है। तथा पहले पानी की कमी नहीं थी और लोगों की संख्या कम होने से घर पर ही सब खेती करके परिवार का पालन – पोषण कर लेते थे, परन्तु आज के समय में परिवार की बढ़ौतरी की वजह से अधिकतर परिवार शहरों में जाकर बस रहे हैं।

कुमाऊँनी संस्कृति के बारे में हमने बताने का प्रयत्न किया है कि वहाँ के लोगों का रहन – सहन, खान – पान, वेशभूषा, व्रत – त्योहार तथा कुमाऊँ का नाम कुमाऊँ कैसे पड़ा तथा वहाँ की भौगोलिक स्थिति एवं सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक स्थिति को अभिव्यक्त करने की कोशिश की है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध में लोककथा का स्वरुप निरुपण, विशेषताएँ उसका विकास बताया गया है। लोककथाएँ मानवजीवन से ही जुड़ी है तथा इसका अपना साहित्य है भारत में अलग – अलग जगह पर लोककथाएँ सुनने को मिलती है।

भारत में तरह – तरह की लोक कथाएँ है वहीं कुमाऊँ क्षेत्र में भी बहुत प्रकार की कथाएँ सुनने में आती हैं। जैसे धार्मिक, सामाजिक, नीतिपरक, राजनितिक, व्रत, पशु – पक्षी, भूत – प्रेत, प्रकृति आदि। इन कथाओं को लोगों ने अपनी ज़ुबानी कहा है। तथा अलग – अलग स्थान पर समय के साथ ऐसी कथाएँ बनती रहती हैं। इन्हीं को कुछ लेखकों, लेखिकाओं ने अंकित करने का प्रयत्न किया है। लोककथा में कथा कही जाती है। जो गद्य के रुप में लिखी जा सकती है। परन्तु लोकगाथा गेयात्मक तथा लिखितात्मक दोनों रुपों में पायी जाती है।

कुमाऊँ की लोक कथाओं में सांस्कृतिक तत्व को प्रथम बार उजागर किया गया है। कथाओं में सांस्कृतिक तत्व कहाँ है यह उभारने का साहस किया है। किसी किसी कथा में सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक तीनों तत्व देखने को मिलते हैं। मैंने नई तथा पुरानी संस्कृति का भी अध्ययन किया है और साथ ही साथ कुछ कथाओं को पूछकर उनको भी स्थान देने का प्रयत्न किया है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध में कुमाऊँनी संस्कृति के क्रमिक विकास का एवं सतत् विस्तार का लेखा – जोखा प्रस्तुत किया गया है। कुमाऊँनी संस्कृति का साहित्यिक

अवदान तथा इससे संबंधित अनेक कृतियों का परिचय भी प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। यहाँ यह भी सिद्ध किया जा रहा है कि कुमाऊँनी संस्कृति का संपूर्ण स्वरुप उसके लोक साहित्य में नहीं था बल्कि वहाँ के लोक संस्कारों में भी परंपरा से प्रचलित लोक गीतों में भी यह तथ्य समाहित है। हमने यथाप्राप्य तत् संबंधी लोक साहित्य से तथा विद्वानों द्वारा संपादित सांस्कृतिक, साहित्यिक कृतियों से तत्व ग्रहण करते हुए वहाँ की स्थानिक लोक संस्कृति से भी साक्षातकार द्वारा जो तथ्य संपादित किये हैं उनका यथोचित प्रयोग इस शोध प्रबंध में किया गया है। अतः इस दृष्टि से यह शोध प्रबंध सर्वथा मौलिक एवं प्रमाणिक स्थापनाओं पर आधारित है।

अंत में मैं निवेदन करना चाहती हूँ कि मेरे अध्ययन की परिसीमाएँ रही हैं। बहुत कुछ जो उपलब्ध हो सका उसका अध्ययन मनन कर इस शोध कार्य में उपयोग किया है, हो सकता है कुछ लोक कथाओं की चर्चा मेरे शोध यात्रा में ना आ पाईं हो और जिनकी चर्चा यहाँ नहीं हो पाई हो उनके प्रति मेरी विवशता ध्यावत है।

।। इति शुभम् ।।